पब्लिक ट्रांसपोर्ट में यौन हिंसा झेलती स्त्रियां

रूपम मिश्र

एक समय बाहर की दुनिया स्त्रियों के लिए बहुत सुरक्षित नहीं समझी जाती थी। स्त्रियों के घर में ही रहने का चलन बन गया था। बहुत कम औरतें घर से बाहर निकलती थीं। लेकिन आज समय बदल रहा है, महिलाएं घर से बाहर निकल कर काम कर रही हैं। लड़कियां स्कूल-कॉलेज, कोचिंग संस्थानों आदि में जा रही हैं और हर सामाजिक गतिविधियों में बराबर भागीदारी कर रही हैं। पर जब वे घर से बाहर निकलती हैं, यात्रा के लिए पब्लिक ट्रांसपोर्ट का उपयोग करती हैं, तो आए दिन उन्हें यौन हमले का शिकार होना पड़ता है, जो उन्हें गहरे मानसिक तनाव में डाल देता है। समाज में अलग-अलग तरह से महिलाओं के साथ यौन हिंसा के इतने भयावह अनुभव हैं कि जिन पर बात करते हुए लगता है कि समाज अब भी सभ्य होने से कितना दूर है।

स्नेहलता रायबरेली में रहती हैं, पेशे से टीचर हैं। उनका घर से बाहर निकलने का मन नहीं करता। वो सिर्फ़ अपने विद्यालय में जाकर बच्चों को पढ़ाती हैं और उसके बाद सारा दिन घर में बंद रहती हैं। ऐसा नहीं है कि स्नेहलता को बाहर घूमना-फिरना या यात्रा करना पसंद नहीं है, लेकिन पब्लिक प्लेस पर और पब्लिक ट्रांसपोर्ट में उनके साथ कुछ इस तरह की अलग-अलग यौन हिंसा हुई है कि वो अब बाहर निकलने से घबराती हैं। स्नेहलता बताती हैं कि एक बार वो ट्रेन से दिल्ली गयीं। यात्रा के दौरान ट्रेन में उनके साथ बेहद घृणित यौन हिंसा हुई और तब से उनके मन में अकेले यात्रा को लेकर अजीब सा डर बैठ गया है। वह जिस ट्रेन में सफ़र कर रही थीं, संयोग से उसमें लोग कम थे। उनके कम्पार्टमेंट में एक-दो ही लोग थे। उनको लगा अभी और लोग अलग-अलग स्टेशनों से आएंगे। रात थी तो थोड़ी देर में वह सो गयीं। उनकी तबीयत कुछ ठीक नहीं थीं। थकान भी थी, तो दवा खाकर सो गयीं। जिस समय उनके साथ यौन हिंसा हुई वह गहरी नींद में थीं और चेतना होने पर उन्होंने चिल्लाना शुरू किया तो वो अपराधी भाग गया, लेकिन इस हादसे की भयावहता उनके मन में बैठ गयी। उसे याद करते हुए स्नेहलता सिसक उठती हैं। यह सिर्फ़ एक स्त्री की बात नहीं है, यौन कुंठा से भरा समाज आए दिन इस तरह की हिंसाएं करता रहता है।

गीतिका इलाहाबाद में रहकर एक निजी इंटर कॉलेज में अध्यापन करती हैं। बताती हैं कि ऑटो से एक दिन घर लौटते समय कुछ टीनेजर लड़के उन्हें पीछे ग़लत तरीक़े से छूने लगे। उन्होंने विरोध किया तो उन लड़कों ने बेहद बदतमीज़ी से गीतिका की उम्र का हवाला देकर भद्दी टिप्पणी की। ये आए दिन की बात है। किशोरों को यह ट्रेनिंग पुरुषवादी समाज देता है। पहले वो यौन हिंसा करेंगे। विरोध करने पर आपके रंग-रूप और उम्र पर कमेंट करेंगे।
लखनऊ यूनिवर्सिटी में पढ़ रही आस्था बताती हैं कि एक दिन गाँव लौटते हुए बस में सीट नहीं मिली तो खड़ी होकर यात्रा कर रही थीं। बस में एक अधेड़ व्यक्ति लगातार उनकी छाती पर हाथ रखता जा रहा था। अंततः आस्था ने जोर से चीखते हुए विरोध किया। लेकिन आसपास के लोगों ने इसे उनका भ्रम बताया। आस्था कहती हैं कि दिक़्क़त यह भी है कि हमारे आसपास कोई इस अपराध को गंभीरता से नहीं लेता।

इलाहाबाद के झूँसी इलाके में रहती हैं शालिनी। विश्वविद्यालय में पढ़ाई करती हैं। उन्होंने भी बताया कि आए दिन ऑटो रिक्शे में बैठे लोग इस तरह की गलीज हरकतें करते हैं। वह कभी-कभी विरोध करती हैं, तो कभी बस ग़ुस्से से घूर कर चली आती हैं। इसी तरह का अनुभव साझा करते हुए इलाहाबाद यूनिवर्सिटी की छात्रा साक्षी कहती हैं, 'मैं एक एग्जाम देने के लिए दिल्ली जा रही थी। अपने कोच की एक सीट पर मैंने एक महिला को सोते हुए देखा और पास में एक युवक को खड़े देखा। मुझे उसे देखकर बहुत अजीब लगा पर सोचा कि शायद कोच अटेंडेंट हो। मैंने उसे नज़रअंदाज कर

दिया। थोड़े समय के बाद मैंने देखा कि सब सो रहे है और वह नीचे वाली सीट पर आकर बैठ गया है। वो महिलाओं की सीट के पास इधर-उधर कर रहा था। मुझे लगा कहीं वह चोर तो नहीं। पर ध्यान से देखा तो पता चला कि वह भी उसी कोच से कहीं जा रहा यात्री है। कुछ देर बाद वह अपनी सीट पर जाकर बैठ गया। फिर मैं सो गई। अचानक एक महिला ने ज़ोर से आवाज़ की और मेरी नींद टूट गई। उस महिला की नींद अपने शरीर पर पड़ते हाथों से खुली थी और वह रोने-चिल्लाने लगी। इतनी देर तक कोच अटेंडेंट आ चुका था और उसने टीटी को बुलाया। टीटी उसे उस कोच से निकाल कर अगले डिब्बे में ले गया। उस महिला को मैंने 139 पर कॉल करने को कहा। इमरजेंसी हेल्प और अगले स्टेशन पर आरपीएफ की हेल्प के लिए। उस समय मुझे सबसे अजीब यही लग रहा था कि उस घटना से महिलाओं के अलावा किसी को कोई फ़र्क़ नहीं पड़ रहा था।'

यौन हिंसा करते इस पितृसत्तात्मक समाज ने स्त्रियों के आत्मविश्वास को इस हद तक तोड़ रखा है कि बुरी से बुरी परिस्थिति में भी उन्हें स्वयं के ग़लत ठहराये जाने का डर हमेशा बना रहता है। और उस घटना से यह भी दिखा कि लोग कितने संवेदनहीन हो चुके हैं। किसी की मदद करना तो दूर, उनसे सही के हक़ में एक आवाज़ तक नहीं निकलती।

ये घटनाएं किसी एक जगह या किसी एक पब्लिक ट्रांसपोर्ट की बातें नहीं हैं। सोनाली मुंबई में रहती हैं, जॉब करती हैं। उन्होंने बताया, 'ट्रेन में या ऑटो में अक्सर बच्चियों को या खुद मुझे चढ़ते-उतरते समय कुछ अंकल जैसे लोग भीड़ में गंदे तरीके से स्पर्श करते हैं।' सोनाली आगे कहतीं हैं, 'मैं अक्सर लोकल ट्रेन से ही सफ़र करती हूँ। एक दिन हड़बड़ी में ट्रेन के पुरुष डिब्बे में चढ़ गयी। डिब्बे में काफ़ी भीड़ थी। मेरी नज़र अचानक ऐसी जगह गयी, जहाँ बड़ी उम्र के लोग काफ़ी गंदे तरीके से किसी बच्ची को टच कर रहे थे और ऐसे दिखा रहे थे कि कुछ नहीं कर रहे हैं। कुछ पुरुषों की नजर भी गयी वहां, लेकिन वे देख कर भी अनदेखा कर दे रहे थे। मेरी तरह और भी लड़कियां उस डिब्बे में सब देख रही थीं, लेकिन किसी ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी जबकि वो बच्चियां नाबालिग थीं।'

ऐसे अपराधों की इतनी कड़ियाँ हैं कि एक लड़की से बात करने पर इन्हें लेकर न जाने कितनी कड़ियाँ खुलने लगती हैं। दिल्ली में पढ़ाई करती महिमा का अनुभव भी कुछ ऐसा ही है। उन्हें दिल्ली से अपने घर आने के लिए ट्रेन से यात्रा करनी पड़ती है। वो कहती हैं कि उन्होंने खुद भी झेला है और ऐसी घटना को किसी और महिला के साथ होते हुए भी देखा है। महिमा कहती हैं, 'पहले तो मैं इन घटनाओं से बिल्कुल ही डिप्रेशन में चली जाती थी। कई दिनों तक उसी घटना को सोच कर मुझे अपने रूम में भी नींद नहीं आती थी। फिर मैंने अपने आपको मानसिक रूप से इन घटनाओं से निकलने के लिए तैयार किया। वैसे तो मैं ट्रेन में सफ़र करते समय कभी नहीं सोती हूं पर अब मैं इसलिए जागती हूं कि कहीं मेरा सामान न चोरी हो जाए, जबकि मेरा मन जैसे इस हिंसा के लिए अभ्यस्त हो गया है।'

एकबारगी हम महिमा जैसी छात्रा की बातें सुनकर कांप जाते हैं कि यह कैसा समाज है जहां हमारी बच्चियां इस अपराध को जैसे स्वीकार कर चुकी हैं। रुचि को रोजाना 12 से14 किलोमीटर की यात्रा बस या ऑटो से करनी पड़ती है। वह कहती हैं, 'मैं आए दिन इस तरह की यौन हिंसा की शिकार होती हूं और कई दिनों तक उसी घटना के बारे में सोचती रहती हूं। मुझे कई दिनों तक नींद नहीं आती। मैं सबसे ज्यादा परेशान तब होती हूं जब मैं इसका पूरी ताक़त के साथ विरोध नहीं कर पाती। मेरा विरोध न के बराबर होता है और यह यातना सहते हुए ही अपनी यात्रा ख़त्म करती हूँ।'

तमाम लड़कियों से बातचीत करके पता चलता है कि स्थिति काफ़ी भयावह है और तीव्र विरोध न होने से ऐसा करने वालों को बढ़ावा मिलता है। दरअसल पितृसत्तात्मक कंडीशनिंग ने हमारे सोचने-समझने और व्यवहार तक को इस तरह प्रभावित किया है कि हम अपने अधिकार को भी उससे एकदम से अलग करके नहीं देख पाते। यौन हिंसा को लेकर हम अपने शरीर पर अपने अधिकार की बात अगर अपनी चेतना में स्वीकार कर लेते तो तुरंत उस हिंसा का विरोध करते, लेकिन अक्सर हम अपनी देह पर होती यौन हिंसा का विरोध तुरंत नहीं कर पाते, जबकि वहीं देखा जाता है कि हम समान आदि को लेकर ज्यादा जागरूक होते हैं, जैसे हमारा समान जितना अपना है, हमारी देह उतनी हमारी नहीं है। पब्लिक प्लेस पर कोई हमारा समान छूता है तो हम तुरंत विरोध कर देते हैं, जबकि उतनी तत्परता से देह छूने का विरोध नहीं करते, किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर सोचते रह जाते हैं। राज्य-समाज मिलकर हमें पहले ही इतनी तरह की लड़ाइयों में उलझा देते हैं कि हमारे पास देह पर अपने अधिकार की लड़ाई लड़ने के लिए ऊर्जा और समय नहीं रह जाता। उस लड़ाई में हम अपने संघर्ष के साथ असहाय, निराश-हताश अकेले पड़ जाते हैं।

(लेखिका हिंदी की सुपरिचित कवयित्री हैं)